Vol. 9, Issue: 7, July: 2021
ISSN:(P) 2347-5404 ISSN:(O)2320 771X

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में एक राष्ट्रवादी लेखक का अविस्मरणीय योगदान

डॉ. संगीता शुक्ला
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग,
नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ
सहसम्बद्ध लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ

पुरानी पीढ़ी के भारतीय इतिहासकारों में सबसे प्रसिद्ध और अंतर्राष्ट्रीय ख्याति वाले इतिहासकार रोमेश चंद्र मजूमदार थे।[1] डॉ. रमेश चन्द्र मजूमदार पिता श्री बाबू हलधर मजूमदार और माता बिधुमुखी की होनहार संतान थे। आर. सी.मजूमदार का जन्म 4 दिसम्बर 1884 को हुआ था। यह फरीदपुर जिले के खंडरपारा ग्राम के निवासी थे। जो वर्तमान काल मे बांग्लादेश के क्षेत्र में आता है। अपने छात्र जीवन मे वह ईश्वर चंद्र विद्यासागर से प्रभावित थे। वे रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद के परम भक्त भी थे।[2]

डॉ. रमेश चन्द्र मजूमदार सर्वप्रथम कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्रवक्ता के पद पर नियुक्त हुए। फिर ढ़ाका विश्वविद्यालय, भारत (वर्तमान बांगला देश) में एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हुए और कला संकाय के अधिष्ठाता का उत्तरदायित्व भी वहन किया। डॉ. मजूमदार नागपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग के अध्यक्ष रहे। वे ढ़ाका विश्वविद्यालय के कुलपति भी बने। वे शिकागो विश्वविद्यालय और पेंन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय में भारतीय इतिहास के अतिथि प्रोफेसर भी रहे, वे भंडारकर ओरियंटल शोध संस्थान, पूना के अवैतनिक सदस्य रहे। उन्होंने भारतीय इतिहास कांग्रेस तथा आल इंडिया ओरियंटल कांफ्रेस तथा रामकृष्ण मिशन संस्कृति संस्थान, कलकत्ता के अध्यक्ष पद को भी सुशोभित किया।[3]उन्होंने बंगाली भाषा में अपनी आत्मकथा भी लिखी थी, जिसका नाम है ''जीबानेर स्मृति दिपिका'' (Jibaner Smriti dipika)। इस आत्मकथा का पुनः प्रकाशन 22 मार्च 2019 को किया गया।[4]

मजूमदार के 'हेरास मेमोरियल' व्याख्यान (1967) इतिहास लेखन पर उनके विचारों का सार है।[5]इतिहासकार मजूमदार को रांकेवादी मत का अनुयायी माना जाता है क्योंकि उन्होंने तथ्यो को सबसे अधिक महत्व दिया। विश्लेषण और व्याख्या में पारंगत इतिहासकार ने ऐतिहासिक व्याख्या से व्यक्तिपरकता को हटाने का प्रयत्न किया। उन्होंने किसी सिद्धांत का प्रतिपादन करने या कोई दर्शन अथवा विचारधारा प्रस्तुत करने के लिए तथ्यों को हाशिए पर रखने से इनकार कर दिया। मजूमदार ने रांके[6] के इस सूत्र वाक्य का स्वयंतोपालन किया ही, दूसरों को भी प्रेरित किया कि किसी इतिहासकार का कार्य ''केवलवह सब दर्शाना है जो वस्तुतः हुआ।'' अतीत के सत्य का निश्चयीकरण जहाँ तक इसे निश्चित किया जा सकता है, सभी ऐतिहासिक अध्ययनों का एक उद्देश्य एक विधानहै। वे निरंतर ह्यासोन्मुखी मानकों तथा उन सभी प्रगतियों के कारण, जिन्हें वे हमारे ऐतिहासिक अध्ययनों में पनप रहे विषवृक्ष मानते थे, उद्विग्न महसूस करते थे। अक्टूबर 1968 में श्रीनगर (कश्मीर) में आयोजित इतिहास अध्ययन संस्थान के छठी वार्षिक संगोष्ठी में अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में उन्होंने सम रिसेंटट्रेन्ड्स (**Some Recent Trends)** शीर्षक के अन्तर्गत 'इतिहास' विषय पर विचार अभिव्यक्त किये।[7]जिसमें वे किसी कारणवश उपस्थित नहीं हो पाए थे और अपना अध्यक्षीय वक्तव्य भेज दिया था। इस सम्मेलन के लिए तैयार किए गए अध्यक्षीय संभाषण से उनके विचारों और उनकी ऐतिहासिक दृष्टि को भलीभाँति समझा जा सकता है। जिसमें उन्होंने कहाः इतिहास लेखन का मुख्य उद्देश्य सत्य की खोज है। सत्य से विच्छिन्न इतिहास राष्ट्र की सहायता नहीं करता है। इसका भविष्य सत्य की स्थायी नींव पर टिका होना चाहिए न कि छदम के रेतीले धरातल पर, चाहे यह वर्तमान में कितना

भी आकर्षक क्यों न दिखता हो। भारत अब चौराहे पर खड़ा है और मैं अपने युवा मित्रों से यह अनुरोध करूंगा कि वे जिस पथ को चुननाचाहे, उसेचुननेमेंसावधानी बरतें।[8]

भारतीय इतिहास के विभिन्न चरणों की सामग्रियों पर केन्द्रित सूक्ष्म विवरणों एवं दक्षिण–पूर्वी एशिया के इतिहास तथा संस्कृति के पूर्व–यूरोपीय काल पर असाधारण पकड़ रखने वाले मजूमदार ने जो भी लिखा वह केवल पुस्तकीय ज्ञान से नही लिखा। वह वास्तव में उन स्थलों की यात्रा भी करते थे। ऐसे स्थलों पर महीनों निवास कर स्थानीय लोगों से संपर्क करके मूलभाषाओं में लिखे शिलालेख पढ़ते थे और अज्ञात तथ्यों को प्रकाश मे ंलाने के लिए प्रयासरत रहते थे। [9]

अपनी पुस्तक आउटलाइन ऑफ इंडियन हिस्ट्री एंड सिविलाइजेशन में (1927) मजूमदार ने भारत के सांस्कृतिक विकास का क्रमिक विवरण प्रदान किया है क्योंकि उनका मानना था कि भारतीय संस्कृति का मूल्यांकन केवल राजनीतिक घटनाओं पर नही किया जाना चाहिए। इसके लिए उन्होंने 'भारतीय संस्कृति में समाज के लोकव्यवहार में अंतर के बहुव्यापी लोकप्रचलन या अधिकतर लोगों के द्वारा अपनायी गयी परंपराओं के आधार पर प्राचीन भारत के स्वाभाविक, सांस्कृतिक विकास को समझाने के लिए आदिकाल से 1200 ई. के काल खण्ड को तीन शीर्षकों में वर्गीकृत किया है–
1.आदिकाल से छठी शताब्दी ई. पू.,
2.2. छठी शताब्दी इ. पू. से 300 ई. तक,
3.3. 300 इ. से 1200 ई. तक।

उसके अतिरिक्त दकन का इतिहास, प्रशासन, शिक्षा, व्यापार, कला तथा हिन्दू समाज का वर्णन तो किया ही है। साथ ही मोटे तौर पर संस्कृति के महत्वपूर्ण बिन्दुओं का काल–क्रमानुसार विवरण भी दिया है।

अपने क्षेत्र को व्यापक बनाते हुए मजूमदार ने दक्षिण–पूर्वी एशिया के भारतीय कृत राज्यों के इतिहास एवं संस्कृति पर गूढ़ अनुसंधान आरंभ किया। उनका प्रयास अंततः तीन खंडो ंमें प्रकाशित कृति एंशिएंट इंडियन कॉलोनी जइन द फारईस्ट के रूप में फलीभूत हुआ।[10]सुदूर पूर्व में प्राचीन भारतीय उपनिवेश चम्पा तथा सुवर्णदीप के विषय मे ंजानकारी प्रकाशित की। जिससे पता चलता है कि दक्षिणपूर्व एशिया 290 ईसापूर्व से 15वीं शताब्दी सी. ई तक सांस्कृतिक रूप से भारतीय क्षेत्र के प्रभाव में था। इस समय हिंदू–बौद्ध प्रभावो ंको स्थानीय राजनीतिक व्यवस्था में शामिल किया गया था। उन्होंने सुदूर पूर्व में प्राचीन भारतीय उपनिवेश खण्ड दो में सुवर्णद्वीप का वर्णन किया। सुदूर पूर्व मे ंप्राचीन भारतीय उपनिवेश मलय प्रायद्वीप और मलय द्वीप समूह में हिंदू उपनिवेशीकरण से संबंधित हैं। इस खंड में हिदू उपनिवेश की शुरूआत, शैलेंन्द्र साम्राज्य, भारत जावानी साम्राज्य के उत्थान और पतन और सुर्वणद्वीप में हिंद ूराज्यों के पतन को शामिल किया गया है। इस खण्ड दो पुस्तकको उन्होंने बुक 5 एवं 6 नामक उप शीर्षकों में वर्गीकृत किया हैं। जिसमें बुक 5 में सुवर्णद्वीप में राजनीतिक इतिहास, संस्कृति एवं सभ्यता का विवरण दिया गया है। बुक 6 में सुवर्ण द्वीप में कला पर प्रकाश डाला गया है। यह कार्य सुवर्णद्वीप बनाने वाले विभिन्न क्षेत्रों के राजनीतिक इतिहास की जानकारी को एक साथ लाता है और उन लोगों की सभ्यता के विभिन्न पहलुओं जैसे, धर्म, साहित्य, कानून और प्रशासन, सामाजिक और आर्थिक स्थितियों और कला से संबंधित है। सुदूर पूर्व मे ंप्राचीन भारतीय उपनिवेश खण्ड 3 में प्राचीन भारतीय उपनिवेश कम्बुज का वर्णन मिलता है। उनकी योजना दो या तीन अन्य खण्ड प्रकाशित करने की थी जिसमें कम्बुज, वर्मा, और स्याम के विषय में विस्तृत जानकारी देनी थी। यह दौर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का था। जिसमें मजूमदार ने भारतीयों के मन में भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग और स्वाभिमान की अलख जगाये रखने के लिए अपने लेखन से निरंतर प्रयास किया।

भारतीय उपमहाद्वीप के दक्षिण–पूर्वीतट के राज्यों ने बर्मा, थाईलैंड, इंडोनेशिया, मलय प्रायद्वीप, फिलीपींस, कंबोडिया और चंपा आदि दक्षिणपूर्व एशियाई राज्यों के साथ व्यापार, सांस्कृतिक और राजनीतिक संबंध स्थापित किए थे।[11] इसकी आंतरिक गुणवत्ता के अतिरिक्त यह कृति इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि इसने अनभिज्ञ पाठकवर्ग को दक्षिण–पूर्वी एशिया के एक हजार वर्ष के इतिहास द्वारा प्राचीन भारतीय प्रयत्नों

का एक व्यवस्थित विवरण प्रदान किया। तीन खण्डो मे चम्पा तथा सुवर्णद्वीप के विषय में जानकारी प्रकाशित की।

अपने अभिन्न मित्र नीलकंठ शास्त्री की तरह दक्षिण–पूर्वी एशिया के भारतीय कृतराज्यों का वर्णन 'हिन्दू उपनिवेशों' के रूप में करने के कारण मजूमदार पर राष्ट्रवादी (उपनिवेशवादी) दृष्टिकोण रखने का आरोप लगाया जाता है। इस संदर्भ में एच.बी. सरकार ने स्पष्ट किया हैं कि एन.जे.क्रोम, जिन्होंने भारतीयकरण या हिंदवीकरण की उक्त प्रघटना की विषद व्याख्या प्रस्तुत की है, ने जावा की संस्कृति का वर्णन करने के क्रम में 'हिंदु–जावानीज' पद का प्रयोग किया है। एन.जे.क्रोम ने इस बात पर भी बल दिया कि संस्कृति का भारतीय घटक महत्वपूर्ण था। ईस्वीसन् की दसवीं शताब्दी में जब तक इस्लाम उस क्षेत्र मे एक राजनैतिक या सांस्कृतिक शक्ति के रूप मे नही उभरा था, तब तक भारतीय लेखनकला, साहित्य, विधिग्रंथ, राजकार्य, राजाओं के दैवीकरण, राजसी आडंबर, भारतीय धर्म, सामाजिक व्यवस्था, कला तथा स्थापत्य कला के बिना तत्कालीन दक्षिण–पूर्वी एशिया की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।[12]

1857 के संग्राम पर अपनी कृति में मजूमदार ने उस घटना को एक राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के रूप में नहीं देखा। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि अंग्रेजों के विरूद्ध लड़ने वाला सबसे महत्वपूर्ण वर्ग सिपाहियों का था जो राष्ट्रीय, राजनैतिक या धार्मिक कारणों के बजाय भौतिक लाभ की आशाओं से प्रेरित थे। उन्होंने लिखा कि ''1857–58 की विभीषिका और रक्तपात भारत में स्वतंत्रता आंदोलन की प्रसव पीड़ा को नहीं बल्कि मध्यकाल के जीर्ण अभिजात्य वर्ग और केंद्रापसारी सामंतवाद के विघटन की प्रक्रिया को इंगित करते थे।'' फिर भी मजूमदार बल देकर कहते है कि 1857 की महान घटना का अप्रत्यक्ष तथा परवर्ती महत्व था। यह भारतमें शक्तिशाली ब्रिटिश सत्ता के लिए एक चुनौती का प्रतीक था और प्रथम राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम की सारी गरिमा इसमे अंतर्भूत थी।[13]

ठसी प्रकार 'द हिस्ट्री ऑफ बंगाल' भी तीन खण्डों में प्रकाशित हुयी। बंगाल के इतिहास पर आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लिखे जाने का मूलविचार बंगाल प्रेसिडेंसी के प्रथम गर्वनर लॉर्ड कर्माइकेल का था। सर्वप्रथम उन्होंने अपनी इस योजना को महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री को बताया था। उनकी योजना बंगाल के इतिहास पर तीन खण्ड लिखने की थी जिसके इतिहास का विभाजन तीन कालों मे किया गया था–हिन्दू, मुस्लिम और ब्रिटिश काल। अज्ञात कारणवश इस योजना पर कोइ कार्य नही हो सका। कुछ वर्षों के पश्चात स्वर्गीय राजा प्रफुलनाथ टैगोर के पौत्र कालीकृष्ण टैगोर ने इन खण्डों के प्रकाशन के लिए समस्त व्यय वहन करने की इच्छा जाहिर की और स्वर्गीय श्री राखलदास बनर्जी को तत्कालीन सुविख्यात विद्वानों की सहायता से लेखनकार्य के लिये निमंत्रित किया। वस्तुतः ढ़ाका विश्वविद्यालय स्थापना के साथ हीबंगाल के इतिहास पर लिखे जाने की आवश्यकता पर चर्चा की जाने लगी थी। सर जदुनाथ सरकार ने जुलाई 1933 में अपने एक व्याख्यान के दौरान यह मन्तव्य दिया कि बंगाल का इतिहास लिखा जाना आवश्यक है। इस योजना मे वह अपना पूर्ण सहयोग देंगे।

डॉ0 मजूमदार के समय में भारतीय इतिहास को तीन भागों में बांटे जाने की प्रथा थी हिन्दू, मुस्लिम और ब्रिटिशकाल। कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया ने अपन विभिन्न खण्डो में प्रकाशित इतिहास लेखन में इसी वर्गीकरण को मान्यता प्रदानकी। इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस ने भी इसी वर्गीकरण के अनुसार भारत का इतिहास लिखा। डॉ0 मजूमदार ने इस वर्गीकरण का अधिकार पूर्वक विरोध किया। उनका कहना था कि वर्गीकरण समान तत्व के आधार पर किया जाए अर्थात या तो हिन्दू, मुस्लिम एवं ईसाई, जिससे अध्ययनकर्ता को यह स्पष्ट हो कि वर्गीकरण धर्म के आधार पर किया गया है। अथवा इसका विभाजनकाल खण्ड के अनुरूप होना चाहिए। भारत मे मुस्लिम शासन की स्थापना से पूर्व लगभग चार हजार वर्ष का इतिहास और संस्कृति उपलब्ध है। सम्पूर्ण विश्व में भारतवष्ज्ञ जैसा कोई भी देश नही है जिसमें इतने बड़े सुदूर अतीत को सुरक्षित रखा है। अतः इसका वर्णन करने में इस तथ्य पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। भारत में मुस्लिम आधिपत्य का समय केवल 400 वर्ष या अधिकतम 500 वर्षो तक माना जा सकता है। तदनुसार मध्यकाल का प्रारम्भ 1000 ई0 से माना जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि मध्यकाल से तात्पर्य मात्र मुस्लिम शासन नहीं है। इस अवधि में शक्तिशाली मराठा साम्राज्य भी कायम हुआ

था। जिसका समय लगभग 1707 से 1818 ई. है। मुस्लिम शासक औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात मराठा और भी शक्तिशाली हुए थे। ब्रिटिशसत्ता का आधिपत्य 200 वर्षों से भी कम रहा है। अतः ब्रिटिशर्स के द्वारा भारतीय इतिहास का विभाजन न तो तर्कपूर्ण है और न औचित्यपूर्ण है। मजूमदार ने अपने इतिहास लेखन में यूरोप के इतिहास के विभाजन की तरह भारतीय इतिहास को तीन क्रमो में वर्गीकृत किया–प्राचीन, मध्य और आधुनिक काल।[14]

1934 मेंसर ए.एफ रहमान ढ़ाका विश्वविद्यालय के कुलपति बने और उन्होंने एक बंगाल का इतिहास प्रकाशन समिति का निर्माण किया। इस समिति के आठ सदस्यों में सर जदुनाथ सरकार एवं प्रो0 आर.सी. मजूमदार भी सम्मिलित थे। उस वक्त तक आर.सी.मजूमदार 'द हिस्ट्रीआफ ऐशियन्ट इण्डियन कालोनीस इन द फार ईस्ट' पर अपना शोध कार्यकर चुके थे। इस कमेटी ने बंगाल के इतिहास को तीन खण्डों में लिखे जाने का निर्णय लिया। प्रथम खण्ड के सम्पादक डॉ. आर.सी.मजूमदार तथा द्वितीय तथा तृतीय खण्ड के संपादक सर जदुनाथ सरकार बने। इस इतिहास के लेखनकार्य में हुई कठिनाईयों का आभास इस पुस्तक की भूमिका से लगाया जा सकता है। जिससे स्पष्ट है कि प्रकाशन के दौरान कमेटी में कई उलटफेर हुए। जिसमें से कुछ सदस्यों ने इस्तीफा भी दिया। इसी क्रम में 1940 में डॉ. डी. सी. गागुंली को सहसचिव नियुक्त किया गया। इस दौरान डॉ. आर.सी.मजूमदार कुलपति के दायित्व का वहन कर रहे थे। इसके प्रकाशन में राय बहादुर के. एन.दीक्षित जो तत्कालीन महानिदेशक भारतीय पुरातत्व विभाग थे, ने सहृदयतापूर्वक सहयोग दिया और मूर्तियों, चित्रों एवं अभिलेखों इत्यादि विभिन्न साम्रगी को अध्ययन हेतु विद्धानो को उपलब्ध कराया। ढाका विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र मिस्टर एस.सी.दास ने सहयोग दिया और मिस्टर आर.के.घोषाल ने इस ग्रन्थ के प्रूफ का अध्ययन किया और अनुक्रमणिका तैयार की। इस खण्ड की भूमिका डॉ.मजूमदार ने 15 अप्रैल 1943 में लिखी। मजूमदार ने गुर्जर प्रतिहार, अर्ली हिस्ट्री ऑफ बंगाल तथा अरब इन वेजन ऑफ इण्डिया नामक पुस्तकें भी लिखीं।

डॉ. आर.सी.मजूमदार के समय में औपनिवेशिक इतिहासकारों का तर्क यह था कि अपने सम्पूर्ण इतिहास में भारत सबसे अधिक सुखी, समृद्ध और संतुष्ट अंग्रेजों के समय में ही रहा। ए.एल.बॉशम एवं रमेशचन्द्र मजूमदार को यह श्रेय दिया जाता है कि उन्होंने अपने–अपने तरीके से भारत के प्राचीन इतिहास का अनौपनिवेशीकरण करते हुए जेम्स मिल, थामस, मैकाले, विनसेण्टस्मिथ आदि द्वारा निर्मित नकारात्मक रूढ़ छवियो को ध्वस्त किया। यह अलग बात है कि लंदन के उस स्कूल में मार्क्सवादी एवं राष्ट्रवादी दोनों ही प्रकार के भारतीय इतिहासकार थे।

डॉ. मजूमदार ने अपने लेखन के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए कहा है कि 'मैंने लंबे समय से हमारे तथा कथित भारतीय इतिहास की अपर्याप्तता को महसूस किया था कई वर्षों से मैं भारत के विस्तृत इतिहास की योजना बना रहा था ताकि दुनिया उसकी आत्मा की एक झलक पा सके जैसा कि भारतीय देखते हैं। भारत का इतिहास यह नही है कि उसने कैसे विदेशी आक्रमणों को झेला, बल्कि यह कि कैसे उसने उनका विरोध किया और अंततः उन पर विजय प्राप्त की।' उनका कहना था कि इस संदर्भ में उनके अपने शब्दों में 'इतिहास व्यक्तियों या समुदायों का सम्मान नहीं करता है और व्यक्ति को हमेशा सच बोलने का प्रयास करना चाहिए।'

भारतीय विद्याभवन, मुम्बई से प्रकाशित पुस्तक श्रृंखला ''हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ इन्डियन पीपुल'' के अर्न्तगत 11 जिल्दों का प्रकाशन मजूमदार ने किया, जिसकी तुलना कुछ विद्वानों ने आर्थर लेवेलिन बॉशम कृत 'दि वण्डर दैट वाज इण्डिया : ए सर्वे ऑफ इण्डियन कल्चर ऑफ इण्डियन सबकाण्टीनेण्ट बिफोर कमिंग ऑफ मुस्लिम्स'' (प्रकाशक–यूनाइटेड किंगडम, 1954)[15]से की है। वस्तुतः मजूमदार द्वारा संपादित उपरोक्त 11 खण्ड भारतीय संस्कृति और समाज की जानकारी के लिये एक मानक ग्रंन्थ सिद्ध होते हैं इस प्रकार बॉशम की पुस्तक की अपेक्षा इनमें कहीं अधिक जानकारी प्रदान की गई है। अतः बॉशम की पुस्तक उपयुक्त होते हुए भी उसके समकक्ष नहीं मानी जानी चाहिये।

यह ''हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ इन्डियन पीपुल'' विशाल परियोजना आचार्य आर.सी.मजूमदार और श्री के.एम. मुंशी दोनों के सहयोग से सफल हो पायी। श्री के.एम.मुंशी में आर. सी. मजूमदार को एक अटल समर्थक मिला जिसने ऐतिहासिक सत्य के लिए अपने जुनून को साझा किया और आर.सी.मजूमदार में मुंशी को भारतीय इतिहास लिखने की अपनी भव्य दृष्टि को लागू करने के लिए सबसे अच्छा व्यक्ति मिला। हिस्ट्री एण्ड कल्चर श्रृंखला के एकादश खण्ड में प्रो0 आर.सी.मजूमदार ने अपने संरक्षक कुलपति डॉ. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की है। जिसमें उन्होंने 1945 में डॉ. के.एम.मुंशी से अपनी पहली मुलाकात का उल्लेख किया है।

आर.सी. मजूमदार के व्यक्तित्व की खास बात उनकी ईमानदारी और विपरीत परिस्थितियों मे भी निडरता थी। कोई भी हो वह सच्चाई से समझौता नहीं करते थे। उनका कहना था कि भारतीय इतिहास लेखन के लिए शुद्ध ऐतिहासिक और साहित्यिक रूप में पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है, जिसका तात्पर्य प्राकृतिक, उत्तेजना, शैली और मूल्य से है। प्राचीन भारतीय साहित्य मे हिन्दुओं के पुराणों, बौद्ध–जातकों और भक्तिगीतों में सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। इन ग्रंथों मे समाज तथा सामाजिक स्थिति का समुचित ढंग से वर्णन किया गया है। डॉ0 आर.सी.मजूमदार अस्पष्ट लिपियों को पढ़ने मे कुशल थे। यद्यपि यह सम्पूर्ण कार्य श्रमसाध्य और उबाऊ है लेकिन यही कारण है कि उनकी पुस्तकें आदि का लिक हैं और विद्वानों की भावी पीढ़ियों के लिये मार्गदर्शक बन गयी हैं। मजूमदार ने प्राचीन लक्ष्यद्वीप पर पहला व्यापक इतिहास लिखा।[16]

डॉ. मजूमदार ने जो कुछ भी लिखा वह तथ्यों से प्रमाणित करके लिखा इतना ही नही वह प्रायः अपनी पुस्तकों के अन्त में प्रत्येक अध्याय से संबंधित संदर्भग्रंथों की सूची भी प्रस्तुत कर देते थे, जिससे संबंधित विषय में विस्तार से अध्ययन करने के इच्छुक जिज्ञासु उन पुस्तकों का प्रयोग कर सकें। वे भावी इतिहासकारों से अपेक्षा करते थे कि उनके लेखन पर वे समीक्षा करें और उनकी अतिव्यस्तता के कारण जो कमी रह गयी हो उसे निसंकोच उजागर करें। वह अपने समीक्षको को यह आश्वासन देने में कोई संकोच नही करते थे। कि यदि उन्हें कोई किसी भी प्रकार का लेखन संबंधी परामर्श देगा, तो यदि वह अपने पुस्तक का अगला संस्करण निकालने में समर्थ होंगे। तो उस परामर्श को भी उसमें समाहित कर लेंगे।[17]

मजूमदार ने भारत के इतिहास का लेखन यूरोपियन दृष्टि से न करके सावधानी पूर्वक तथ्याधारित ऐतिहासिक लेखन का प्रतिमान स्थापित किया। जो उस समय तक अप्रचलि तथा। भारतीय संस्कृति का वर्णन करने में अतिश्योक्ति या उसकी कमियों को कम करके आंकना उनके इतिहास लेखन की प्रवृत्ति नहीं थी। उन्होने जहाँ एक ओर ब्रिटिश इतिहासकारों के अस्पष्ट दृष्टि एवं व्यवहार के विरूद्ध प्रतिक्रिया व्यक्त की वहीं दूसरी ओर भारतीय संस्कृति की अद्वितीयता, प्राचीनता, निरन्तरता तथा स्वतंत्र अस्तित्व पर विस्तार से लिखकर भारत को गर्व का अनुभव कराया। इतिहास लेखन में यूरोपीय दृष्टि वे किसे मानते थे इसे भी उन्होंने स्पष्ट करते हुए दो उदाहरण दिये हैं। प्रथम, वेविसेंण्टस्मिथ की पुस्तक का उदाहरण देते है जिसमें स्मिथ ने यवन नरेश सिकन्दर ने भारत पर कैसे विजय की यह विवरण प्रदान करने में इतना अधिक रूचि ली कि भारत पर आक्रमण का विस्तृत विवरण देने में अपनी पूरी पुस्तक का 1/7 भाग इसी विवरण से भर दिया है।[18]अब जबकि आधुनिक यूरोपीय इतिहासकार ग्रीस का महिमामंडन करने में अधिक रूचि ले रहे है तो उनके लिए यह तथ्य गौड़ हो गये हैं। दूसरी ओर यदि भारतीय इतिहासकारों को लें तो उनके लिए सिकन्दर के आक्रमण का उतना ही महत्व है, जितना सुलतान महमूद, तैमूरलंग या नादिर शाह के आक्रमण का महत्व रहा है।

उदाहरण के तौर पर उनकी किताब की एक पंक्ति कोलें, जिसमें कहा गया है, ''यूरोप की निपुण और अनुशासित सेनाओं से प्रतिरोध करने पर महान ऐशियायी सेनाओं की पीढ़ियों से चली आ रही कमजोरी उजागर हो गयी।'' उन्होंने भारत की राजनीति और सैनिक कुषलता पर एक भी प्रषंसात्मक शब्द का प्रयोग नहीं किया है। इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण ले, हर्ष के शासन के पष्चात भारत की राजनीतिक अवस्था का वर्णन करते समय उन्होंने टिप्पणी की कि हर्ष के शासन के पष्चात वही हुआ जो भारत मे हमेशा किसी प्रमुख सत्ता के नियंत्रण के अभाव में होता रहा है। स्मिथ के यही भाव उनकी एक अन्य पुस्तक में दिखायी

पड़ते हैं। जो न केवल भ्रामक हैं बल्कि योजना बद्ध तरीके से आधुनिक काल के पाठकों के मन में भारत के प्रति दृष्टिकोण और धारणा को विकृत करने के लिए अभिव्यक्त किये गये है। यूरोपीय विद्वानों ने प्राचीन भारतीय इतिहास और सभ्यता के विषय में प्रचुर सामग्री संकलित की है। इसके लिए भारत को उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए। यद्यपि उनके लेखन में उनके इस पूर्वाग्रह का प्रदर्शन मिलता है कि वह भारतीयों से श्रेष्ठ हैं और भारतीय एक निकृष्ट एवं निम्न नस्लवाले हैं। मजूमदार का मानना था कि इतिहास लेखन साम्राज्यवादी या यूरोपीय दृष्टिकोण से पृथक होना चाहिए। मजूमदार ने अपने लेखन को राजनीतिक इतिहास तक ही सीमित नहीं रखा वरन् उन्होंने प्राचीन भारत के विभिन्न सांस्कृतिक पक्षों जैसे विभिन्न धर्म, समाज, साहित्य, कला, वास्तुकला, व्यापार वाणिज्य, शिक्षा व्यवस्था तथा सुदूर पूर्व में भारतीय संस्कृति के प्रभाव आदि पर भी उनका मानना था कि भारतीय संस्कृति का मूल्यांकन केवल राजनीतिक घटनाओं पर नहीं किया जाना चाहिए।

इसी वक्तव्य में उन्होंने 1919 में पूना में आयोजित प्रथम आल इण्डिया ऑरिएण्टल कांफ्रेस का उल्लेख किया। जिसकी अध्यक्षता प्राच्यविद सर आर. जी. भण्डारकर ने की थी। इस संगोष्ठीमें अध्ययन प्राचीन मुख्यतः प्राचीन भारत तक ही सीमित रहा, थोड़ा बहुत मध्यकालीन भारत पर चर्चा हुई। जहाँ तक आधुनिक भारत का प्रश्न है इसके लिये 1919 में ही हिस्टॉरिकल रिकार्ड कमीशन की स्थापना की गई। जिसका अध्ययन क्षेत्र आधुनिक भारत था इसमें इतिहासकारों की अपेक्षा शिक्षा विभाग के सचिव अध्यक्ष बने और सरकार द्वारा नामित सात सदस्य के अतिरिक्त राज्यों, विश्वविद्यालयों तथा अन्य संस्थानों के प्रतिनिधि के रूप में लगभग पचास सदस्यों का यह संगठन था जिसका उद्देश्य मुख्यतः ब्रिटिशकाल के दस्तावेजो पर चर्चा करना था।[19]

इसके लगभग अट्ठारह वर्षों के पश्चात इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस अस्तित्व में आई। जिसका प्रधान क्रमशः इतिहास अध्ययन संस्थान ने राष्ट्रीय जीवनी का शब्दकोश (Dictionary of National Biography) नामक परियोजना पर कार्य किया। मजूमदार इस सार्वभौमिक विचार की सहमति व्यक्त करते हुए कहते हैं कि इतिहास लेखन का मुख्य उद्देश्य सत्य की खोज है। निबहर[20]तथा रांके[21](Ranke) ने इतिहास का मुख्य सिद्धान्त यही बताया है। आधुनिक इतिहास दर्शन के प्रमुख विचारको में से एक निबहर (Niebuhr) लिखते हैं कि ईश्वर के सम्मुख हमें यह कहने में सक्षम होना चाहिए कि मैने जानबूझकर या बिना पर्याप्त जाँच पड़ताल किए ऐसा कुछ नहीं लिखा जो असत्य हो। रांके इतिहास लेखन में मूल की समीक्षा कर आने वाले युगों के लिये वर्तमान को निर्देश देने का कार्य का दायित्व वहन करने की इतिहासकार के उत्तरदायित्व पर टिप्पणी करते हुए लिखते है कि इतिहासकार का दायित्व, वास्तव में इतिहास का प्रमुख दायित्व यह लिखना है कि वास्तव में क्या हुआ था।

वस्तुतः आर.सी.मजूमदार कल्हण के इस वक्तव्य से सहमत थे कि ऐतिहासिक सत्य के यर्थाथिक उदघाटन के लिए 'राग–द्वेष बहिष्कृत' पद्धति अपरिहार्य है और जिसे इतिहास की आधुनिक अवधारणा में 'वस्तुनिष्ठता' की संज्ञा से सर्वस्वीकृति वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति का भारतीय पूर्व रूप कहा जा सकता है।[22]यदि मीमांसादर्शन से मजूमदार के विचारों की तुलना करे तो हम पाते हैं कि उन्हें मीमांसा दर्शन सुविदि तथा और उनके विचार में इस दर्शन की झलक मिलती है। विचार शास्त्र के अनुसार विषय का निर्णय हठ पर नहीं अपितु परीक्षण पर होती है। विषय –संशय –पूर्वपक्ष –उत्तरपक्ष–प्रयोजन–ऐसे विचार की कसौटी पर कसा हुआ निर्णय हीरा है। विलोडन से निकला हुआ सिद्धान्त स्वच्छ एवं पवित्र नवनीत है। संसार क्या है और उसमें हमारा क्या स्थान है, दर्शन हमें इसका प्रत्यक्ष प्रदर्शन करा देता है। जीवन की अणभंगुरता का उपदेश कर वह हमें प्रेरणा देता है कि इसमें ऐसी कोई वस्तु नहीं, जिससे मोह करना शांतिदायक हो। वह हमें निर्लोभ, संतुष्ट, शांत, अहिंसक और विचारशील बनाता है। इसी विचारशीलता के आधार पर हम राग द्वेष की सीमा से निकलकर विश्वबन्धुत्व की भावना को मूर्ति मान बना सकते है। जिस प्रकार एक ही पत्थर से दो प्रतिभाएं निर्मित हों, एक राम के आकार की हो दूसरी रावण की। राम की आकृति वाली प्रतिभा को देखकर एक आस्तिक जन को उसमे राग उत्पन्न हो जाता है और रावण की प्रतिभा में द्वेष। वह इन दोनो मूर्तियो को देखते हुए यह दृष्टि नहीं रखता कि इन दोनों में पत्थर नामक वस्तु समान है अपितु वह

उनके नाम और आकार विशेष मात्र पर दृष्टि डालता है जिससे एक में राम की भावना से अनुराग और दूसरी में रावण भावना से द्वेष उत्पन्न हो जाता है। मान व इसी भावना जगत के द्वारा शासित है–इसलिए इसके शासन से मुक्त होना उसके लिये असंभव नही तो दुशक्य अवश्य है। इसके शासन को उच्छिन्न करना दर्शन का प्रमुख कार्य है। दर्शन की इस देन से मनुष्य अंधानुयायी नहीं रहता–वह अच्छी तरह जान लेता है कि जिस वस्तु में राम के कारण अनुराग और रावण के कारण द्वेष की भावना की जा रही है, वह न राम है न रावण। वह तो एक पत्थर है। जो दोनो में समान है। उसकी यही विवेकशीलता उसे निष्ठावान बना देती है। इस राग, द्वेष की भावना के नष्ट हो जाने पर चित्तवृत्ति निश्चिन्त, एकतोमुख और सतत प्रसन्नता प्राप्त कर साम्यावस्था धारण कर लेती है, जहाँ उसके लिये कोई प्रिय है और न अप्रिय। न कोई स्वीय और न अपर'–यही मानवता की पराकाष्ठा है।[23]

संदर्भग्रन्थ

1. E. Sreedharan: A Textbook of Historiography; ई. श्रीधरन, इतिहास–लेख 500 ई.पू. से सन् 2000 तक,अनुवाद–मनजीत सिंह सलूजा, प्रथमसंस्करण 2011, पुर्नमुद्रित 2012, ओरियंटब्लैकस्वॉन, पेज 423–426, ISBN: 978 8125042808
2. Dharma Discourse.com; Upinder Singh: A History of Ancient and Early Medieval India: From Stone Age to the 12th Century
3. गुप्त, हीरालाल, प्राचीनभारत के आधुनिक इतिहासकार, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1991 आईएसबीएन 8171240739
4. Dharma Discourse.com; Warder, A K, An Inroduction to Indian Historiography, Hariyana Sahitya Academy, Chandigarh, 1971
5. गुप्त, हीरालाल, वही ; G.P. Singh, Evolution of Indian Historical Tradition; F.E. Pargiter, Ancient Indian Historical Tradition
6. Ranke, Leopold Von, 115-The Theory and Practice of History Ed. Georg G. Iggers, ISBN 9780415780339
7. Ed. Sen A P, Historians and Historiography in Modern India, 1976, : Majoomdar, R C, Some Recent Trends, Pg. XVIII, XIX
8. Ed.Philips C H, Historian of India, Pakistan and Ceylon, Oxford University Press, School of Oriental and African studies, 1961,Series-Historical, Writing on the People of Asia, Page-13-24, Part-1 (A) Ancient India : Majumdar R.C., Ideas of History in Sanskrit Literature
9. गुप्त, हीरालाल,वही
10. Majoomdar R C, Indian Colonies in the Far East, The Punjab Oriental (Sanskrit) Series No 16, Lahore,1927 ,pg 34
11. Majoomdar R C,Op.cit
12. Majoomdar R C,Op.cit
13. Majoomdar R C, The Sepoy Mutiny and the revolt of 1857, Calcutta,1957
14. Majoomdar R C, The History of Bengal Vol-1 Hindu Period
15. Sen. A.P, Op. cit; Ganesh Rajak, International Journal of Research in Humanities & Soc. Sciences, Historical Consciousness in Ancient India, Vol. 8, Issue: 7, July: 2020 ISSN:(P) 2347-5404 ISSN:(O)2320 771X
16. Sen. A.P, Op.cit; Pathak, V S, Ancient Historians of India,1966
17. इण्डियनकॉलोनीइन द फॉरइस्ट खण्ड–2 इन्टरनेटपर यूआरएलपर//Indianculture.gov.in//flipbook/89790 कोटाइपकरकेसंबंधितसंदर्भग्रंथों की सूचीकोपढा जासकताहै।
18. Smith, V, Ancient India
19. Sen. A.P., op.cit
20. Niebuhr, Reinhold, The Irony of American History, Reprint edition 2008, ISBN10:0226583996
21. Ranke, Leopold von,op.cit
22. मीमांसादर्शन, पेज 28–29,45,47–48
23. वही, पेज 48–50